स्वामी विवेकानंद और राष्ट्रवाद–एक समीक्षा

ओमप्रकाश कुमार

शोध सरांश :–तत्कालीन युग की सबसे बड़ी माँग राष्ट्रवाद थी, जिसे स्वामी विवेकानन्द ने अपनी ओजस्वी वाणी में व्यक्त किया। यह "राष्ट्रवाद कोई अमूर्त और संकीर्ण अवधारणा नहीं है। वह विश्व–बन्धुत्व से ओत–प्रोत है,जिसके मूल से भारत की सनातनता एवं सन्तानों का हित निहित हैं। इसीलिए कन्या कुमारी में अपनी समाधि से उठकर स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि "मैंने देखा है कि भारत माता ओर जगदम्बा में कोई भेद नहीं हैं। भारत माता की पूजा ही जगदम्बा की पूजा है। भारतमाता की सेवा का अर्थ है, भारत की सन्तान की सेवा।" शिकागो की धर्म संसद में अपने विश्व–विख्यात व्याख्यान के पश्चात प्रसिद्धि के शिखर पर अवस्थिति स्वामी विवेकानंद का मन मर्मान्तक पीड़ा से भर उठता है– "ओह माँ! नाम और प्रसिद्धि लेकर मैं क्या करूंगा, जब मेरी मातृभूमि अत्यन्त गरीब हैं। कौन भारत के गरीबों को उठायेगा? कौन उन्हें रोटी देगा? हे माँ मुझे रास्ता दिखाओं, मैं कैसे अनकी सहायता करूँ? इस प्रकार आपका राष्ट्रवाद आमजन का अपना राष्ट्रवाद है जो स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व पर आधारित है। स्वामी विवेकानन्द स्वतन्त्रता के प्रबल पक्षधर है। आपके अनुसार "स्वाधीनता ही विकास की पहली शर्त है।" लन्दन के एक व्याख्यान में आपने कहा था, "यह विश्व क्या है? स्वतन्त्रता में इसका उदय होता है और स्वतन्त्रता पर ही यह अवलम्बित है।" यह बात उन्होंने सिंह की मांद में घुसकर ललकार के स्वर में कही थी क्योंकि ब्रिटेन उस समय सबसे बड़ा साम्राज्यवादी देश था। आपने "चार जुलाई" शीर्षक कविता में स्वतंत्रता को पूरी दुनिया में छा जाने की मूर्त कल्पना की है। एक जीवन–मूल्य के रूप में स्वतन्त्रता की तभी सार्थकता है जब वह सामाजिक समानता पर आधारित हो।